Volume-1, Issue-01, Aug 2014 ISSN: 2349-7637 (Online)

RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)

Research Paper

लोक साहित्य के पारिवेशिक संदर्भ

Dr. Rekha Mishra

Lecture (Hindi), Government College, Sikrai (Dausa), Rajasthan

Abstract:

लोक साहित्य किसी समाज की सांस्कृतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक पहचान का जीवंत दर्पण है। यह न केवल कथाएँ, गीत, कविताएँ और कहानियाँ प्रस्तुत करता है, बल्कि समाज के मूल्य, परंपराएँ, विश्वास और जीवन शैली को भी प्रतिबिंबित करता है। लोक साहित्य को उसके पारिवेशिक संदर्भ में समझना अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि सामाजिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ ही इसके निर्माण और संवर्धन को आकार देती हैं। सामाजिक संदर्भ लोक कथाओं में जाति, वर्ग, लिंग और समुदाय के नियमों और संघर्षों को दर्शाता है। भौगोलिक और प्राकृतिक संदर्भ किसी क्षेत्र की जलवायु, भूमि और प्राकृतिक परिवेश को प्रतिबिंबित करता है। ऐतिहासिक और सांस्कृतिक संदर्भ लोक साहित्य में सामूहिक स्मृति, युद्ध, शासन और परंपराओं के अनुभव को जीवित रखते हैं। धार्मिक और नैतिक संदर्भ लोक कथाओं और गीतों में सामाजिक अनुशासन, नैतिक शिक्षा और सांस्कृतिक एकता बनाए रखने में सहायक होते हैं। अतः लोक साहित्य का अध्ययन उसके पारिवेशिक संदर्भ के माध्यम से समाज की मानसिकता, जीवन दृष्टि और सांस्कृतिक संरचना को समझने का महत्वपूर्ण साधन है।

Keywords: **लोक साहित्य, समाज, सांस्कृतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, मूल्य, परंपराएँ, विश्वास।**

शोध विस्तार:-

वर्तमान जीवन में समयानुरूप परिवर्तन दृष्टिगत होता है जिससे जीवन संश्लिष्ट और जटिल होता जा रहा है। बदलते पारिवेशिक सन्दर्भों में लोक जीवन में आधुनिकता और पारम्परिकता का अद्भुत संयोग हो रहा है। बढ़ते औद्योगिकीकरण, संचार माध्यमों का प्रसार, शिक्षा प्रसार और नैतिकता के बदलते प्रतिमान आज लोक जीवन को प्रभावित कर रहे हैं। लोक साहित्य के इन विविध अंगों यथा कथा, गीत, गाथा, मुहावरे, कहावतें, पहेलियां, प्रवाद, आख्यान आदि के अध्ययन करने एवं एकत्रित करने की विभिन्न प्रविधियां हैं। इस मौखिक, साहित्यिक परम्परा को कलात्मक लिखित स्वरूप देना ही इस लेख का अभिप्राय नहीं है अपितु उसके माध्यम से सभी मनुष्यों को कल्पना के सौन्दर्य पूर्ण परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास भी निहित है।

लोक शब्द संस्कृत की लोक धातु में घञ् प्रत्यय के योग से बना हुआ है। ऋग्वेद में पुरुष सूक्त में लोक शब्द जीवन और स्थान के अर्थ में प्रयोग हुआ है। अमरकोष में लोक के जगती, विष्टप, भुवन और जगत जैसे अर्थ मिलते हैं। वामन शिवराम आप्टे ने लोक के संसार, विश्व का एक भाग, पृथ्वी, भूलोक, मनुष्य, प्रजा, समूह, क्षेत्र, आदि अर्थ किए हैं। लोक शब्द का प्रयोग हिन्दी साहित्य में भी विभिन्न अर्थों में हुआ है। हिन्दी संत साहित्य में कहीं तो लोक का प्रयोग मृत्युलोक तथा पृथ्वी के संदर्भ में है, कहीं लोक का प्रयोग सारे संसार के अर्थ में भी व्यापक रूप से किया गया है। 'नाव मेरी डूबी रे भाई ताते बढी लोक बडाई।' कहीं लोक शब्द वेद के प्रतिकूल लोक परम्परा का अर्थ देता है इस अर्थ में लोक शब्द का प्रयोग संत काव्य में कई स्थानों पर हुआ है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी लोक शब्द का जन सामान्य के अर्थ में प्रयोग किया है - 'लोकहुं वेद सुसाहिब रीति। विनयसुत पहिचानत प्रीति'। इस प्रकार लोक, इहलोक परलोक,परिपाटी-परम्परा, जनसामान्य अर्थों में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि जो लोक संस्कृत तथा परिष्कृत लोगों के प्रभाव से मुक्त रहते हुए अपनी पुरातन स्थिति में वर्तमान है उन्हें लोक की संज्ञा से अभिहित किया जा सकता है। वास्तव में लोक हमारे जीवन का महासमुद्र है, उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। लोक राष्ट्र का अमर स्वरूप है। "लोक कृत्स्न ज्ञान और सम्पूर्ण अध्ययन का पर्यावसान है। अर्वाचीन मानव के लिए लोक सर्वोच्च प्रजापति है। 'लोक, लोक की धात्री सर्वभूता माता पृथ्वी'। मानव इसी त्रिलोकी में जीवन का कल्याणतम रूप है।"

डॉ. सत्येन्द्र ने लोक की स्थिति को अवचेतन मानस में अवस्थित माना है, लोक प्रवृतियों का स्थान मानस है। चेतन मानस में तो यह सदैव विद्यमान नहीं रहते। ये तो अवचेतन मानस की भांति मनुष्य के समग्र व्यक्तित्व को प्रेरित करते रहते हैं। इसलिए दाय से प्राप्त मानस का स्थान अवचेतन मानस में ही हो सकता है। इस प्रकार अवचेतन मानस के दो भेद स्वीकारने होंगे, एक सहज अवचेतन, दूसरा उपार्जितावचेतन। यह सहज अवचेतन ही लोक मानस है। इस प्रकार लोक की भाषा अथवा बोली में मौखिक एवं परम्परागत रूप से प्रचलित लोकमानस की सहज अभिव्यक्ति लोक साहित्य है।

RHIMRJ, All Rights Reserved *ISSN:* 2349-7637 (Online)

"नृत्य, गीत और कथा लोक जीवन की पावन त्रिवेणी है। जनपदीय जीवन का यह त्रिक उसके रस का अक्षय सोता है और उसके मंगल का पुरातन विधान है। वह पुराना होने पर भी नित नया है। जैनपद की शाश्वत आत्मा का स्थूल रूप नृत्य द्वारा उल्लखित होता है, इस मूर्त रूप को ही वैदिक शब्दों में वाक् कहा जाता है। जनपद की प्राण धारा से सम्पादित कर्म की कहानी को जन्म देते है एवं उसके मन की भावभूमि से गीतों का जन्म होता है। नृत्य, कथा और गीत की त्रिसूत्री जनपदीय आत्मा के वाक्, प्राण, मन हैं।"

लोक के सम्बन्ध में डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल का कथन पठनीय है - हमारी कृषि, अर्थ-शास्त्र, ज्ञान, साहित्य कला के नाना रूप, भाषाएं और शब्दों के भण्डार, जीवन के आनन्दमय पर्वोत्सव, नृत्य, संगीत, कथावार्ताएं, आचार-विचार सभी कुछ भारतीय लोक में ओत-प्रोत हैं। लोक की गंगा युग-युग से बह रही है। उसके ओजस्वी प्रवाह में हमारी संस्कृति के मेघ जल पूर्व युगों से बरसते रहे हैं, सम्प्रति बरस रहे हैं और आगे भी उनकी सहस्त्र धाराएं लोक जीवन की भागीरथी को आगे बढ़ाती रहेंगी। लोक हमारे जीवन का महा समुद्र है, उसमें भूत, भविष्य, वर्तमान सभी कुछ संचित रहता है। लोक ही राष्ट्र का अमर स्वरूप है लोक के कृत्स्न ज्ञान और सम्पूर्ण अध्ययन में सब शास्त्रों का पर्यावसान है। अर्वाचीन मानव के लिए लोक सर्वोच्च प्रजापति है। लोक की धात्री सर्व भूत लोक माता पृथ्वी और लोक का व्यक्त रूप मानव। यही हमारे नए जीवन का अध्यात्म शास्त्र है। इनका कल्याण हमारी मुक्ति का द्वार और निर्वाण का नवीन रूप है। लोक-पृथ्वी मानव इसी त्रिलोकी में जीवन का कल्याणतम रूप है। लोक का अध्ययन बुद्धि का कुतूहल नहीं है। इसे बस एक और नया शास्त्र कह कर नहीं टाला जा सकता। लोक सम्पर्क के बिना सब शास्त्र अधूरे हैं। लोक का अमृत निस्पन्द जिस शास्त्र में नहीं मिला, वह कितना भी पंडिताऊ हो, निष्प्राण रहता है।

डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय के कथनानुसार भारतीय संस्कृति का सच्चा एवं स्वाभाविक चित्रण लोक साहित्य में उपलब्ध होता है। लोक संस्कृति के वास्तविक स्वरूप को देखने के लिए हमें लोक साहित्य का ही अनुसंधान करना होगा। पारिवारिक जीवन के जो मर्मस्पर्शी दृश्य यहां उपलब्ध हैं, उनके दर्शन अन्यत्र कहां? ऐसा ज्ञात होता है कि जन जीवन को चित्रित करने वाले चतुर चितेरे ने बड़े संयम से अपनी तूलिका का प्रयोग किया है। लोक साहित्य में जहां आदर्श पतिव्रता नारियों का उल्लेख है, वहां ऐसी कर्कशा स्त्रियों का भी वर्णन पाया जाता है जो विधवा होने के लिए सूर्य भगवान से प्रार्थना करती हैं। यहां जहां माता और पुत्री का दिव्य प्रेम दिखलाया गया है, वहां सास बहु तथा भावज-ननद के कटु एवं विषाक्त व्यवहार का वर्णन भी है, भाई बहिन के निस्पृह, पवित्र और दिव्य प्रेम का वर्णन करने के लिए जो जो भी विशेषण प्रयुक्त किया जाय वह थोडा ही है।

मानव जीवन की सहज प्रवृत्तियों के चित्रण में यथार्थवादी साहित्यकार प्राचीन काल से संलग्न हैं। इन्सान की दुर्बलताएं छिपाने पर भी नहीं छिपती हैं और ये निरन्तर विकसित होती रहती हैं। प्रत्येक युग के साहित्य ने इन्हें अपनाया है और बड़ी स्वच्छन्दता से इनका चित्रण किया है। सौन्दर्य के प्रति किसका आकर्षण नहीं है? 'यौवन काल में चांचल्य का प्रस्फुटित होना किसे अप्रिय लगता है? रमणी के हाव-भाव किसे आकर्षित नहीं करते? कामिनी के वाचाल लावण्य ने किसे अभिभूत नहीं किया है? वैभव के प्रति लालायित होना प्रत्येक मानव के लिए स्वाभाविक ही है। चांदनी रातों की तुलना में काली रातें अधिक हैं। धरती की विस्तृत सीमा काले धब्बों से भरी हुई है।' इस प्रकार की विचारधारा यथार्थवादी साहित्यकार को निरन्तर प्रभावित करती रहती है। यथार्थ को वर्तमान ग्राह्य है। इसके लिए भविष्य की कल्पना-निरर्थक है।

"यथार्थवाद का शाब्दिक अर्थ है जो वस्तु जैसी हो, उसे उसी अर्थ में ग्रहण करना। दर्शन, मनोविज्ञान, सौन्दर्य शास्त्र, कला एवं साहित्य के क्षेत्र में वह विशेष दृष्टि कोण जो सूक्ष्म की अपेक्षा स्थूल को, काल्पनिक की अपेक्षा वास्तविक को, भविष्य की अपेक्षा वर्तमान को, सुन्दर के स्थान पर कुरूप को, आदर्श के स्थान पर यथार्थ को ग्रहण करता है, यथार्थवादी दृष्टिकोण कहलाता है।"

वस्तुतः यथार्थवाद साहित्य की एक विशिष्ट चिन्तन पद्धति है, जिसके अनुसार कलाकार को अपनी कृति में जीवन के यथार्थवादी रूप का आकलन करना चाहिए। यह दृष्टिकोण वस्तुतः आदर्शवाद का विरोधी माना जाता है। पर वस्तुतः तो आदर्श उतना ही यथार्थ है, जितनी की कोई यथार्थ परिस्थिति। जीवन में यथार्थवाद की कल्पना दुष्कर है, किन्तु अपने पारिभाषिक अर्थ में यथार्थवाद जीवन की समग्र परिस्थितियों के प्रति ईमानदारी का दावा करते हुए भी प्रायः मनुष्य की हीनताओं तथा कुरूपताओं का चित्रण करता है। यथार्थवादी कलाकार जीवन के सुन्दर अंश को छोड़ कर असुन्दर अंश का अंकन करना चाहता है। यह एक प्रकार से उसका पूर्वग्रह है।

आदर्शवाद एक उच्च लक्ष्य की कल्पना करता है और मानव को दूषित धरातल से उठाकर एक प्रशस्त धरती की ओर बढ़ने के लिए प्रेरित करता है। आदर्शवादी कलाकार जीवन की कालिमा को भूल कर उसकी उदात्त भाव-भूमि को प्रस्तुत करने के लिए उत्सुक रहता है और यथावसर वह अपनी इस कल्पना को साकार बनाता है। सांसारिक सुख क्षणिक है, इसकी परिणति असंतोष है, एवं इस भौतिक समृद्धि के प्रति समुत्पन्न लालसा दानवीय प्रवृति है, यह

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved

ISSN: 2349-7637 (Online)

आदर्शवादी दृष्टिकोण है। आदर्शवादी विचारक की धारणा है कि सच्चा सुख अध्यात्मवाद में है और सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की उपलब्धि ही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है।

लोक एक निरन्तर चलने वाली व्यापक जीवन चेतना की प्रक्रिया है। लोक की समग्रता में भारतीयता की पहचान निहित है। लोक संस्कृति आदिम मानव से लेकर ग्राम्य जीवन की सामूहिक सौन्दर्यमूलक अभिक्रियाओं के साथ-साथ पैदा होने वाला प्राकाट्य है। संभवत: प्रारम्भ में मनुष्य ने स्वयं के आनंद को सबके साथ बांटने के लिए स्वयं में कुछ सर्जनात्मक क्रिया कलापों को किया होगा। धीरे-धीरे सभी व्यक्ति इस प्रकार अपने को अभिव्यक्त करने लगे होंगे।

इस प्रकार एक ही सांस्कृतिक आयाम विविध रूपों में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की रचनात्मक शक्तियों के आन्तरिक दबाव से लोक संस्कृति के रूप में स्थापित हुआ। यह सब लम्बी रचना-प्रक्रिया का परिणाम रहा है। लोक साहित्य में अपनेपन का झूठा अहम् कभी नहीं रहा है। लोक साहित्य समाज में इस प्रकार रचा-बसा है कि जाति-पांति, समुदाय, सम्प्रदाय और भौगोलिक सीमाओं को नहीं मानता है। एक ही गीत बोली के थोड़े से अन्तर के बाद भी वहीं भाव समेटे हुए दूसरे क्षेत्र में प्राप्त हो जाता है। लोक संस्कृति में अभिव्यक्ति के स्तर पर फिर भी अलगाव हो सकता है किन्तु उसके आन्तरिक भाव तन्तु इस देश की सारी संस्कृति को बांधे रखते हैं।

निष्कर्ष:

लोक साहित्य किसी भी समाज की सांस्कृतिक, सामाजिक और ऐतिहासिक पहचान का महत्वपूर्ण अंग है। इसके माध्यम से समाज के जीवन मूल्य, परंपराएँ, विश्वास और अनुभव स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होते हैं। पारिवेशिक संदर्भ में इसका अध्ययन यह दर्शाता है कि लोक साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि समाज की मानसिकता, सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक विविधता का दर्पण है। सामाजिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक और धार्मिक परिस्थितियाँ लोक साहित्य के निर्माण, रूपांतरण और संवर्धन में निर्णायक भूमिका निभाती हैं। अतः लोक साहित्य का पारिवेशिक विश्लेषण समाज और संस्कृति की गहन समझ प्रदान करता है और यह सुनिश्चित करता है कि हमारी सांस्कृतिक धरोहर आने वाली पीढ़ियों तक जीवित और प्रासंगिक बनी रहे।

सन्दर्भ:

1. डॉ. महावीर प्रसाद शर्मा - तोरावाटी का इतिहास
2. श्री मिलाप चंद डण्डिया - राजस्थान ईयर बुक 1976
3. ऋग्वेद सूक्त 3, 53, 12
4. अमर कोश, कोड-2 वर्ग-1, श्लोक 6
5. तुलसीदास - रामचरित मानस (बालकाण्ड)
6. सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति विशेषांक
7. डॉ. सत्येन्द्र - मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्विक अध्ययन
8. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल - लोक कथाएं और उनका संग्रह कार्य
9. डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय - लोक साहित्य की भूमिका
10. डॉ. गणपति चंद्र गुप्त - हिंदी साहित्य - प्रमुख बहसें और रुझान
11. डॉ. धीरेन्द्र वर्मा - हिन्दी साहित्य कोष भाग 1
12. प्रो. सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार
13. ले. हरगोविन्द गुप्त - गांव का मेरू दण्ड किसान की भूमिका

2014, RHIMRJ, All Rights Reserved

ISSN: 2349-7637 (Online)